• कविता...

जिस तरह मैं भटका...

एक ऐसे समय में
मैंने तुम्हारा साथ दिया
जब समय
मेरा साथ नहीं दे रहा था
वे हो सकते हैं
उत्तेजक और अमीर
लेकिन जिस तरह मैं भटका
मिलने को तुमसे पूरी उम्र
भटक कर दिखाएं वे
एक पूरा दिन भी
एक ऐसे समय में
जब प्रेम करना
मूर्खता माना जा रहा था
और अदालतें खिलाफ में
फैसले सुना रही थीं
प्रेमिकाएं
अपने वादों से मुकर रही थीं
और प्रेमी पंखे से झूल रहे थे
मैंने प्रेम किया तुमसे
तमाम खतरों के भीतर से गुजरते हुए

मैंने तुम्हे दिल दिया
जब तुम्हे खुद अपना दिल
संभालना मुश्किल हो रहा था
तुम्हारे सांवले रंग में
गहराती शाम का झुटपुटा होता था हमेशा
एक रहस्य गढ़ता हुआ
मैं एक पेड़ की तरह होता था जहां
अंधेरे में खोता हुआ
एक ऐसे समय में
ज्ब आगे बढ़ने के करतब
कौशल माने जा रहे थे
बादलों की तरह भटकता रहा मैं
मिलने को तुमसे पूरी उम्र
भटककर दिखाएं वे मेरी तरह
एक पूरा दिन भी।

-रंजीत वर्मा

• कहानी/—जयशंकर प्रसाद...

चूड़ीवाली...

गतांक से आगे...

चूड़ीवाली अपने अभ्यास के अनुसार समझती कि यदि बहूजी की अपार प्रणय सम्पत्ति में से कुछ अंश मैं भी लेती हूं, तो हानि क्या, परन्तु बहूजी को अपने प्रणय के एकाधिपत्य पर पूर्ण विश्वास था। वह निष्क्रिय प्रतिरोध करने लगीं। राजयक्ष्मा के भयानक आक्रमण से वह घुलने लगीं और सरकार वन-विहंगिनी विलासिनी को स्वायत्त करने में दत्तचित्त हुए। रोगी की शुश्रूषा और सेवा में कोई कमी न थी, परन्तु एक बड़े मुकदमे में सरकार का उधर सर्वस्वान्त हुआ, इधर बहूजी चल बसीं।

चूड़ीवाली ने समझा कि उसकी पूर्ण विजय हुई, पर बात कुछ दूसरी थी। विजयकृष्ण का वह एक विनोद था। जब सब कुछ चला गया, तब विनोद लेकर क्या होगा। एक दिन चूड़ीवाली से छुट्टी मांगी। उसने कहा-कमी किस बात की है, मैं तुम्हारी ही हूं और सब विभव भी तुम्हारा है। विजयकृष्ण ने कहा-मैं वेश्या की दी हुई जीविका से पेट पालने में असमर्थ हूं। चूड़ीवाली बिलखने लगी, विनय किया, रोई, गिड़गिड़ाई पर विजयकृष्ण चले ही गये! वह सोचने लगी कि-अपना व्यवसाय और विजय की गृहस्थी बिगाड़कर जो सुख खरीदा था, उसका कोई मूल्य नहीं। मैं कुलवधू होने के उपयुक्त नहीं। क्या समाज के पास इसका कोई प्रतिकार नहीं? इतनी तपस्या और इतना स्वार्थ-त्याग व्यर्थ है?

परन्तु विलासिनी यह न जानती थी कि स्त्री और पुरुष-सम्बन्धी समस्त अन्तिम निर्णय करने में समाज कितना ही उदार क्यों न हो; दोनों पक्षों को सर्वथा सन्तुष्ट नहीं कर सका और न कर सकने की आशा है। यह रहस्य सृष्टि को उलझा रखने की कुञ्जी है।

विलासिनी ने बहुत सोच-समझकर अपनी जीवनचर्या बदल डाली। सरकार से मिली हुई जो कुछ सम्पत्ति थी, उसे बेचकर पास ही के एक गांव में खेती करने के लिए भूमि लेकर आदर्श हिन्दू गृहस्थ की-सी तपस्या करने में अपना बिखरा हुआ मन उसने लगा दिया। उसके कच्चे मकान के पास एक विशाल वट-वृक्ष और निर्मल जल का सरोवर था। वहीं बैठकर चूड़ीवाली ने पथिकों की सेवा करने का संकल्प किया। थोड़े ही दिनों में अच्छी खेती होने लगी और अन्न से उसका घर भरा रहने लगा। भिखारियों को अन्न देकर उन्हें खिला देने में उसे अकथनीय सुख मिलता। धीरे-धीरे दिन ढलने लगा, चूड़ीवाली को सहेली बनाने के लिए यौवन का तीसरा पहर करुणा और शान्ति को पकड़ लाया। उस पथ से चलनेवाले पथिकों को दूर से किसी कला-कुशल कण्ठ की तान सुनाई पड़ती-

अब लौं नसानी अब न नसैहौं।

वट-वृक्ष के नीचे एक अनाथ बालक नन्दू को चना और गुड़ की दूकान चूड़ीवाली ने करा दी है। जिन पथिकों के पास पैसे न होते, उनका मूल्य वह स्वयं देकर नन्दू की दूकान में घाटा न होने देती, और पथिक भी सुखिया उसके लिए घर में से कुछ खाने को ले आयी थी; पर कलुआ उधर न देखकर अपनी स्वामिनी से स्नेह जता रहा था। चूड़ीवाली ने हंसते हुए कहा—चल, तेरा दुलार हो चुका। जा, खा ले।

चूड़ीवाली ने मन में सोचा, कंगाल मनुष्य स्नेह के लिए क्यों भीख मांगता है? वह स्वयं नहीं करता, नहीं तो तृण—वीरुध तथा पशु—पक्षी भी तो स्नेह करने के लिए प्रस्तुत हैं। इतने में नन्दू ने आकर कहा—मां, एक बटोही बहुत थका हुआ अभी आया है...

विश्राम किये बिना उस तालाब से न जाता। कुछ ही दिनों में चूड़ीवाली का तालाब विख्यात हो गया।

सन्ध्या हो चली थी। पखेरुओं का बसेरे की ओर लौटने का कोलाहल मचा और वट-वृक्ष में चहल-पहल हो गई। चूड़ीवाली चरनी के पास खड़ी बैलों को देख रही थी। दालान में दीपक जल रहा था, अन्धकार उसके घर और मन में बरजोरी घुस रहा था। कोलाहल-शून्य जीवन में भी चूड़ीवाली को शान्ति मिली, ऐसा विश्वास नहीं होता था। पास ही उसकी पिण्डुलियों से सिर रगड़ता हुआ कलुआ दुम हिला रहा था। सुखिया उसके लिए घर में से कुछ खाने को ले आयी थी; पर कलुआ उधर न देखकर अपनी स्वामिनी से स्नेह जता रहा था। चूड़ीवाली ने हंसते हुए कहा-चल, तेरा दुलार हो चुका। जा, खा ले। चूड़ीवाली ने मन में सोचा, कंगाल मनुष्य स्नेह के लिए क्यों भीख मांगता है? वह स्वयं नहीं करता, नहीं तो तृण-वीरुध तथा पशु-पक्षी भी तो स्नेह करने के लिए प्रस्तुत हैं। इतने में नन्दू ने आकर कहा-मां, एक बटोही बहुत थका हुआ अभी आया है। भूख के मारे वह जैसे शिथिल हो गया है।

तूने क्यों नहीं दे दिया?

लेता भी नहीं, कहता है, तू बड़ा गरीब लड़का है, तुझसे न लूंगा।

चूड़ीवाली वट-वृक्ष की ओर चल पड़ी। अंधेरा हो गया था। पथिक जड़ का सहारा लेकर लेटा था। चूड़ीवाली ने हाथ जोड़कर कहा-महाराज, आप कुछ भोजन कीजिए।

तुम कौन हो?

पहले की एक वेश्या।

छिः, मुझे पड़े रहने दो, मैं नहीं चाहता कि तुम मुझसे बोलो भी, क्योंकि तुम्हारा व्यवसाय कितने ही सुखी घरों को उजाड़कर श्मशान बना देता है।

महाराज, हम लोग तो कला के व्यवसायी हैं। यह अपराध कला का मूल्य लगाने वालों की कुरुचि और कुत्सित इच्छा का है। संसार में बहुत-से निर्लज्ज स्वार्थपूर्ण व्यवसाय चलते हैं। फिर इसी पर इतना क्रोध क्यों?

क्योंकि वह उन सबों में अधम और निकृष्ट है।

परन्तु वेश्या का व्यवसाय करके भी मैंने एक ही व्यक्ति से प्रेम किया था। मैं और धर्म नहीं जानती, पर अपने सरकार से जो कुछ मुझे मिला, उसे मैं लोक-सेवा में लगाती हूं। मेरे तालाब पर कोई भूखा नहीं रहने पाता। मेरी जीविका चाहे जो रही हो, मेरे अतिथि-धर्म में बाधा न दीजिए।

पथिक एक बार ही उठकर बैठ गया और आंख गड़ाकर अंधेरे में देखने लगा। सहसा बोल उठा-चूड़ीवाली?

कौन, सरकार?

हां, तुमने शोक हर लिया। मेरे अपराधजनक तमाम त्याग में पुण्य का भी भाग था, यह मैं नहीं जानता।

सरकार! मैंने गृहस्थ-कुलवधू होने के लिए कठोर तपस्या की है। इन चार वर्षों में मुझे विश्वास हो गया है कि कुलवधू होने में जो महत्व है, वह सेवा का है, न कि विलास का।

सेवा ही नहीं, चूड़ीवाली! उसमें विलास का अनन्त यौवन है, क्योंकि केवल स्त्री-पुरुष के शारीरिक बन्धन में वह पर्यवसित नहीं है, बाह्य साधनों के विकृत हो जाने तक ही, उसकी सीमा नहीं, गार्हस्थ्य जीवन उसके लिए प्रचुर उपकरण प्रस्तुत करता है, इसलिए वह प्रेय भी है और श्रेय भी है। मुझे विश्वास है कि तुम अब सफल हो जाओगी।

मेरी सफलता आपकी कृपा पर है। विश्वास है कि अब इतने निर्दय न होंग-कहते-कहते चूड़ीवाली ने सरकार के पैर पकड़ लिये।

सरकार ने उसके हाथ पकड़ लिये।

-समाप्त

• शायरी...

न देखें तो सुकूं मिलता नहीं है
हमें आख़िर वो क्यूं मिलता नहीं है
मोहब्बत के लिए जज़्बा है लाज़िम
ये आईना तो यूं मिलता नहीं है

◆ ◆ ◆

हम इक मुद्दत से दर पर मुंतज़िर हैं
मगर इज़्न-ए-जुनूं मिलता नहीं है
है जितना ज़र्फ़ उतनी पासदारी
ज़रूरत है फ़ुजूं मिलता नहीं है

◆ ◆ ◆

अजब होती है आइंदा मुलाक़ात
हमेशा जूं का तूं मिलता नहीं है
अगर मिलते भी हों अपने .
खयालात
तो इक दूजे से ख़ूं मिलता नहीं है

◆ ◆ ◆

वो मेरे शहर में रहता है 'ताबिश'
मगर मैं क्या करूं मिलतना नहीं है

-ताबिश कमाल

• आंसुओं में कभी ढली है रात...

आंसुओं में कभी ढली है रात
दर्द बन के कभी उठी है रात
कोई सूरज कहीं से आ जाए
कितनी वीरान हो गई है रात
सुब्ह से हम—कलाम होने को
ज़ीना ज़ीना उतर रही है रात
फिर उजालों का ख़ूं हुआ शायद
क़त्ल—गाहों में बट गई है रात
दिल कुहराम कम न होगा 'असर'
तुम भी सो जाओ सो गई है रात

—मोहम्मद अली असर